

भारतीय धर्म और संस्कृति के उन्नयन में लोक परम्पराओं की आवश्यकता

✍ पद्मिनी

शोध सारांश-

भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक राष्ट्र है। इस लोकतांत्रिक राष्ट्र की खूबसूरती यहाँ की मिट्टी में मौजूद विविधता में एकता है। विविध धर्म, संस्कृति, आचार-विचार, व्यवहार, रंग-रूप होने के बावजूद इसमें मिठास, सौहार्द, अपनापन और स्नेह का रंग घुला-मिला है। इन सबके पीछे भारत की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा धर्म, ऋषि-मुनियों और गुरुओं का ज्ञान संस्कृति, संस्कार उनके उपदेशों का प्रमुख हाथ रहा है।

“भारतीय धर्म एवं संस्कृति के विभिन्न आयामों को आधुनिक परिवेश में परिभाषित किया जाए और इन क्षेत्रों में काम कर रहे लोगों को सरकार द्वारा प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे न केवल भारत का सांस्कृतिक सम्बंध दुनिया से मजबूत होगा बल्कि आर्थिक एवं राजनयिक सम्बंध भी प्रगाढ़ होंगे।”¹

धर्म एवं संस्कृति पर प्रायः होने वाली बहस में यह भुला दिया जाता है कि भारत की पहचान सदा से धर्म एवं संस्कृति ही रही है। ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। जहाँ धर्म संस्कृति का आधार है, वहीं संस्कृति धर्म की संवाहिका है। दोनों ही अपने-अपने परिप्रेक्ष्य में राष्ट्र के निर्माण एवं राष्ट्रियता के संरक्षण में सहायक सिद्ध होते हैं। जहाँ धर्म अपनी स्वाभाविकता के साथ सामाजिक परिवेश का आधार बनता है, वहीं संस्कृति सामाजिक मूल्यों का स्थायी निर्माण करती है। कहना अप्रासंगिक नहीं होगा कि धर्म का सूत्र मानव के सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करता है तो वहीं संस्कृति मानवीय संवेदनाओं को सामाजिक सरोकार से जोड़ती है। इस तरह धर्म कालांतर में संस्कृति का रक्षण करता है और संस्कृति धर्म के आधार का उन्नयन करती है।

जहाँ धर्म हमारे सर्वस्व का प्रतीक रहा तो वहीं संस्कृति हमारी स्वाभाविक जीवनशैली की वाहिका रही है। दोनों ने ही भारतीय मूल्यों को जीवंत रखा है और संसार में इसी कारण से भारत का मान-सम्मान रहा है। प्राचीन समय में धर्म एक नागरिक के जीवन के उद्देश्यों का आधार था। धर्म मात्र प्रतीक नहीं होकर समग्र चेतना का स्तम्भ था। परिणामस्वरूप भारत की सामाजिक आर्थिक एवं नैतिक व्यवस्था मजबूत थी। इस तरह भारतीय का जीवन शांत एवं सुखी था। तब संस्कृति, भारतीयता को परिभाषित करती है और भारत की सारी व्यवस्थाएँ संस्कृति पर आधारित थी। संस्कृति का सौरभ ही हमारे राष्ट्र का सौरभ था। इस तरह से हमारी पारिवारिक एवं सामयिक पृष्ठभूमि निरंतर विकसित होती गई। हमारे वैचारिक दृष्टिकोण का ताना-बाना हमारी संस्कृति पर ही आधारित था और हमारा सम्पूर्ण जीवन उन्नति के चरम पर पहुँचता रहा।

“धर्म और संस्कृति ने मिलकर भारतीयता को विकसित किया।”² धीरे-धीरे हमारी धार्मिक मान्यताएँ और स्थिर होती गई और संस्कृति का क्रमिक विकास होता गया। कहना गलत नहीं होगा कि धर्म और संस्कृति ने मिलकर हमारी भारतीयता को विकसित किया। यह भारतीय धर्म की विशेषता रही है कि वह जटिलताओं में जकड़ा न रहा और सतत् चिन्तन की अवधारणा को विकसित होने में सहायक सिद्ध हुआ, जिसके कारण अनेक भारतीय धर्मों का उदय हुआ। बौद्ध जैन एवं बाद में सिख धर्म ने अपनी चिंतनशैली को विकसित किया, परन्तु मूल में सनातन धर्म ही रहा।

“सनातन धर्म का आशय हिन्दू धर्म मात्र से नहीं, बल्कि बौद्ध जैन और सिख धर्म से भी है।”³ भगवान बुद्ध एवं महावीर ने सनातन धर्म के संस्कार में ही जन्म लिया, और इस तरह उन्होंने अपने चिंतन को स्वतंत्र स्वरूप प्रदान कर नई धार्मिक व्यवस्था का निर्माण किया। भगवान बुद्ध ने सनातन धर्म के अनेक पहलुओं में परिपक्वता प्रदान की और उनकी व्याप्त कुठित व्यवहारों और विचारों से मुक्त होकर भारतीय धर्म को मजबूत किया। उन्होंने धर्म की स्वतंत्र व्याख्या अवश्य की पर मूल में उसके सांस्कृतिक चिंतन को सर्वोच्च स्थान दिया। भारतीय मानसिकता को धर्म की वास्तविकता से संयुक्त किया और हर वर्ग को धर्म से होने वाले लाभ को सुनिश्चित किया।

“भारतीय संस्कृति के समग्र विकास में सभी धर्मों ने अपना-अपना योगदान दिया।”⁴ भारतीय मूल दर्शन सनातन धर्म को दर्शाते हैं और इस तरह हिन्दू, बौद्ध, जैन एवं सिख धर्म उस व्यवस्था को मजबूत करते हैं। यद्यपि न धर्मों को अपने-अपने परिवेश में विकसित होने में धार्मिक स्वतंत्रता अवश्य रही परन्तु सांस्कृतिक एकता बनी रही। भारतीय संस्कृति के समग्र विकास में भारत के सभी धर्मों ने अपना-अपना योगदान दिया। इस प्रकार भारत की सामाजिक व्यवस्था धार्मिक एवं सांस्कृतिक होते हुए भी वैज्ञानिक विचारों को हमेशा आत्मसात करती रही। विकास की नई संभावनाओं को संबल प्रदान करती रही। धर्म के मार्गदर्शन में ही भारतीय चिंतन व्यवस्था पनपी और कालांतर में विश्व की चिंतन व्यवस्थाओं और मान्यताओं को प्रभावित करती रही। परिणामस्वरूप भारत धर्म गुरु के रूप में स्थापित हुआ और इस तरह भारत का सम्बंध विश्व में प्रभावी रूप से कायम हुआ।

“भारतीय धर्म एवं संस्कृति किसी भी देश की मान्यताओं को समाप्त नहीं, बल्कि परिमार्जन करती है।”⁵ भारत में धार्मिक दृष्टिकोण तो प्रचलित हुआ ही साथ ही राजनीतिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक सम्बंधों को भी पनपने और विकसित होने में सफलता मिली। विश्व के अनेक देशों के साथ कई एशियाई देशों से विशेष रूप से हमारा सम्बन्ध प्रगाढ़ बना और भारतीय एवं संस्कृति का भी सम्यक विकास हुआ। आज उन देशों में भारतीय धर्म एवं संस्कृति की विरासत पूरी तरह संरक्षित है, जो इस बात को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है। भारतीय धर्म एवं संस्कृति किसी भी देश अथवा वर्ग की मान्यताओं को समाप्त नहीं करती बल्कि उनका परिमार्जन करती है।

“भारतीय भाषाओं ने विश्व की भाषाओं को प्रभावित किया।”⁶ भारतीय चिंतन पर आधारित अनेक शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक संस्थाएँ दुनिया के विभिन्न हिस्सों में स्थापित होकर काम कर रही हैं। भाषा के मामले में भी देखें तो भारतीय भाषाओं ने विश्व की भाषाओं के निर्माण में भारतीय भाषाओं ने योगदान दिया। एशियाई देशों की अधिकतर भाषाएँ संस्कृत पालि एवं प्राकृत पर आधारित हैं। इस तरह इन भाषाओं से विकसित विदेशी भाषाओं से भारतीय दर्शन एवं संस्कृति का सहज ही ज्ञान परिलक्षित होता है।

“भाषाविदों, धार्मिक गुरुओं ने विश्व में भारत की गरिमा को गौरव प्रदान किया।”⁷ भारतीय भाषाविदों, धार्मिक गुरुओं एवं संस्कृति को पोषित करने वाले व्यक्तियों ने विश्व में अपनी पहचान बनाकर भारत की गरिमा को हमेशा गौरव प्रदान किया। अनेक लोग भारतीय धर्म एवं संस्कृति के माध्यम से आज भी निरंतर सक्रिय हैं। आवश्यकता इसकी है कि भारतीय धर्म एवं संस्कृति के विभिन्न आयामों को आधुनिक परिवेश में परिभाषित किया जाए और इन क्षेत्रों में काम कर रहे लोगों को सरकार द्वारा प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे न केवल भारत का सांस्कृतिक सम्बंध दुनिया से मजबूत होगा, बल्कि आर्थिक एवं राजनयिक सम्बंध भी प्रगाढ़ होंगे।

“भारतीय संस्कृति में धर्म, अध्यात्मवाद ललितकला ज्ञान, विज्ञान, विविध विधाएँ नीति, विधि-विधान, जीवन प्रणालियाँ और वे समस्त क्रियाएँ और कार्य हैं जो उसे विशिष्ट बनाते हैं और जिन्होंने भारतीय के सामाजिक और राजनैतिक विचारों को, धार्मिक और आर्थिक जीवन को साहित्यिक शिष्टाचार और नैतिकता में ढाला है।”⁸

भारत देश में उत्तर से दक्षिण पूर्व से पश्चिम तक अनेक धर्म संस्कृति भाषा होने के बावजूद यहाँ विविधता में एकता विद्यमान है। यहाँ संस्कृति और लोक परम्पराएँ एक दूसरे को बाँध रखी हैं। संस्कृति और धर्म में बहुत अंतर है। धर्म व्यक्तिगत होता है। धर्म आत्मा-परमात्मा के सम्बंध की वस्तु है। संस्कृति समाज की वस्तु होने के कारण आपस में व्यवहार की वस्तु है। लोक का अभिप्राय सर्वसाधारण जनता से है, जिसकी व्यक्तिगत पहचान न होकर सामूहिक पहचान है। दीन-हीन, शोषित, दलित जंगली जातियाँ, कोल, भील, गोंड (जनजाति) संधाल, नाग, किरात, हूण, शक, यवन, खस, पुक्कस आदि समस्त लोक समुदाय का मिला जुला रूप लोक कहलाता है। इन सबकी मिली जुली संस्कृति लोक संस्कृति कहलाती है।

“भारत अनेक संस्कृतियों व परम्पराओं का देश है।”⁹ भारत की पहचान अनेकता में एकता वाले बहु-सांस्कृतिक समुदाय की बन पाई है तो इसका पूरा श्रेय देश की उद्घात व सहिष्णु परम्परा को जाता है। भारत अनेक संस्कृतियों और परम्पराओं का देश है। यहाँ हर धर्म और सम्प्रदाय सैकड़ों वर्षों से अपने ढंग से पल्लवित और पुष्पित होते आये हैं। यह ऐसा देश है, जहाँ धार्मिक विविधता व सहिष्णुता को समाज व कानून दोनों से मान्यता प्राप्त है। धार्मिक सहिष्णुता का अर्थ सहनशीलता अथवा सहिष्णु होने की अवस्था गुण या भाव होता है। भारत के इतिहास में प्राचीनकाल से ही धर्म का यहाँ की संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कई शताब्दियों तक द्रविड़ परम्परा से आर्य परम्परा का सुन्दर संयोग हुआ है। इसके बाद भी अनेक जातियों से सांस्कृतिक सम्मेलन की प्रक्रिया जारी रही। इसकी सुन्दर अभिव्यक्ति वैदिक रचनाओं में मिलती है। वसुधैव कुटुम्बकम् इसका प्रमुख लक्ष्य है।

भारत के साम्राज्य की स्थापना के पीछे चाणक्य की योजना थी। चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य को मोहरा बनाकर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों पर चलते हुए मौर्य समाज की ठोस नींव रखी। चन्द्रगुप्त के बाद बिन्दुसार इस महान साम्राज्य के सम्राट बने उनके दरबार को आजीवक भिक्षु सुशोभित करते थे। भारत के महान सम्राट अशोक आरंभ में शिव के उपासक थे और कलिंग युद्ध के बाद उन्होंने बौद्ध धर्म को अपना लिया। इसके बाद अशोक ने जीवन धम्म का प्रचार किया। उनका धम्म किसी खास संप्रदाय के विचारों तक सीमित नहीं था। अपितु यह एक नैतिक जीवन शैली थी। अशोक ने जो अभिलेख जारी किए थे, वह एक सम्राट के रूप में थे। इनमें अशोक बार-बार सभी सम्प्रदायों के बीच सहिष्णुता

की बात करते हैं। सहिष्णुता की यह परम्परा केवल उत्तर भारत में ही नहीं, दक्षिण भारत में भी दिखती हैं। दो घटनाएँ बताती हैं कि दक्षिण में किस तरह की सांस्कृतिक सहिष्णुता थी। पहला तो केरल के मुजरिम में रोमन राजा ऑगस्टस का मंदिर और दूसरा सेंट टॉम्स की भारत यात्रा। ईसा के बारह शिष्यों में से एक टॉम्स ने ईसाई मत का प्रचार करने के लिए फिलीस्तीन से केरल तक कठिन यात्रा की। प्राचीन भारत के अंतिम हिन्दू-सम्राट कहे जाने वाले हर्षवर्द्धन ने भी व्यापक धार्मिक सहिष्णुता बरती थी और हिन्दू व बौद्ध धर्म को बराबर महत्त्व दिया था। उस समय भारत आए चीनी यात्री ह्वेनसांग ने तत्कालीन भारतीय समाज की धार्मिक सहिष्णुता की खुले दिल से तारीफ की थी।

भारत विश्व के चार प्रमुख धार्मिक परम्पराओं का जन्म स्थान है। ये चार परम्पराएँ हैं। हिन्दू, जैन, बौद्ध व सिख धर्म। इसके अलावा भारत में कई धर्म फले-फूले व पोषित हुए हैं। यहाँ धार्मिक विभिन्नता व धार्मिक विविधता की कोई कमी नहीं है। संविधान में भारत को धर्मनिरपेक्ष गणतंत्र घोषित किया गया है। यहाँ कोई भी नागरिक स्वतंत्र रूप से किसी भी धर्म को अपना सकता है। उसका पालन-पोषण व प्रचार-प्रसार कर सकता है। भारतीय नागरिक आमतौर पर हर धर्म के प्रति काफी सहिष्णुता दर्शाते हैं और धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण बनाए रखते हैं।

वर्तमान में धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता है। धर्म चाहे कोई भी हो, सभी धर्म समान हैं। इसी आस्था के चलते देश में शांति, स्थिरता और सहिष्णुता का वातावरण बना रह सकता है। भारत की संस्कृति बहुआयामी है। जिसमें भारत का महान इतिहास, विलक्षण भूगोल और सिन्धु घाटी की सभ्यता के दौरान बनी और आगे चलकर वैदिक युग में विकसित हुई, बौद्ध धर्म एवं स्वर्ण युग की शुरुआत और उसके अस्तगमन के साथ फली-फूली अपनी खुद की प्राचीन विरासत शामिल है। भारत में विभिन्न प्रकार की भू-आकृतियाँ, भाँति-भाँति की भाषा, कई प्रकार के खान-पान, विभिन्न प्रकार की जातीय समुदाय और नाना प्रकार के रहन-सहन हैं। इतनी विभिन्नताओं की वजह से भारत में सांस्कृतिक विभिन्नता भी सिर चढ़कर बोलती है।

भारतीय संस्कृति का नूतन आयाम ब्रिटिश साम्राज्य की नींव के साथ प्रारम्भ हुआ। इस काल में सभ्यता ने संस्कृति को दबाने की चेष्टा की। अतः संस्कृति का यथार्थ स्वरूप उभर नहीं सका। वर्तमान युग में सामाजिक आचार-विचार पर पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव पड़ा। संयुक्त कुटुम्ब प्रथा के स्थान पर परिवारों का पृथक्करण होने लगा। धर्म निरपेक्षता के सिद्धान्त ने धर्म को पीछे धकेल दिया। विज्ञान ने ज्ञान के अपेक्षित स्वरूप की अपेक्षा कर दी भौतिकवाद उभरकर सामने आया और भारतीयों का सांस्कृतिक दृष्टिकोण अपने मूल लक्ष्य से भटक गया।

आधुनिकता की अवधारणा का समाज में आना आसान हो गया। वैश्वीकरण और आधुनिकीकरण के मध्य में गहरा सम्बंध है। जब भारतीय संस्कृति का स्वरूप आधुनिक हो गया तब निश्चित दिशा में होने वाले परिवर्तन भी दिखाई देने लगे। बुद्धिवाद, विवेकीकरण और उपयोगितावाद आदि दर्शन का उदय संस्कृति का नया स्वरूप बन गया। जिसमें प्रगति की आकांक्षा विकास की आशा और परिवर्तन के अनुरूप अपने आपको ढालने का गुण होता है। आधुनिकता की जड़ें यूरोपीय पुनर्जागरण से जुड़ी हैं। यूरोपीय पुनर्जागरण में नए-नए अन्वेषण और आविष्कार हुए धर्म और दर्शन का नया संस्करण सामने आया। कला और विज्ञान के नवीन साधना का श्रीगणेश हुआ, राजनीतिक तथा समाज व्यवस्था में मौलिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ।

अतः इसके परिणामस्वरूप पश्चिमी यूरोप एवं एशिया (भारत) में एक नवीन चेतना का संचार हुआ। प्रौद्योगिकी विकास, विवेकीकरण एक तर्पणा आदि द्वारा सभी क्षेत्रों में बुनियादी परिवर्तन हुए जिसके परिणामस्वरूप समाज की एक विशिष्ट स्थिति को प्रदर्शित करने वाली अवधारणा बनी। महिलाओं को उचित स्थान मिला अर्थात् बदली हुई संस्कृति में महिलाओं के प्रति सोच बदली अब उसे सशक्तिकरण की ओर ले जाने के प्रयास किये जाने लगे। कई आंदोलन व चर्चाओं का सहारा लिया गया। इस प्रकार सांस्कृतिक, मानववादी व व्यक्तिवादी स्वरूप देखने को मिला।

“मानव के विकासशील एवं सृजनात्मक स्वभाव पर बल देते हुए धर्म एवं तर्क विज्ञान एवं धर्म का ही नहीं वरन् प्राच्य एवं पाश्चात्य विचारधाराओं के समन्वय का प्रयास किया गया। संस्कृति के नए स्वरूप में गाँवों की संस्कृति को छोड़कर शहरीकरण देखा गया। इस पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। शहरीकरण से पलायन भी देखा गया। इस प्रकार लोग पुरानी संस्कृति को छोड़कर आधुनिक संस्कृति को अपनाने लगे।”¹⁰

भारत में कभी भी एक ही संस्कृति पूर्णरूप से व्याप्त नहीं रही और न ही शायद किसी भी बड़े प्रदेश में कभी एक ही संस्कृति रही है। इस देश में आध्यात्मिक संस्कृति की प्रमुखता रही है। अतः संस्कृति में बदलाव निरंतर रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ-

1. संस्कृति भाषा एवं राष्ट्रकृत रामधारी सिंह दिनकर लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ सं०- 22
2. वही, पृष्ठ सं०- 24
3. वही, पृष्ठ सं०- 28
4. वही, पृष्ठ सं०- 32
5. नेमिचन्द्र जैन (दृश्य-अदृश्य) वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं०- 55
6. वही, पृष्ठ सं०- 57
7. वही, पृष्ठ सं०- 59
8. निराला: काव्य में राजनीति संदर्भ संध्या सिंह वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं०- 71
9. वही, पृष्ठ सं०- 73
10. वही, पृष्ठ सं०- 77

